राजस्थान उच्च न्यायालय, जोधपुर

एस.बी. आपराधिक विविध (याचिका) संख्या 2317/2013

छिंदर सिंह

---याचिकाकर्ता

बनाम

राज्य

---प्रतिवादी

याचिकाकर्ता(ओं) के लिए: श्री आर.एस. चौधरी

प्रतिवादी(ओं) के लिए: सुश्री सोनू मनावत, पीपी

श्री आर.एस.भाटी के साथ

माननीय न्यायमूर्ति अरुण मोंगा

<u>आदेश(मौखिक)</u>

<u>29/08/2024</u>

1. याचिकाकर्ता ने आपराधिक पुनरीक्षण संख्या 05/2013 में विद्वान विशेष न्यायाधीश एससी/एसटी मामले, श्रीगंगानगर द्वारा पारित दिनांक 23.09.2013 के आदेश का विरोध किया है, जिसके तहत पुनरीक्षण याचिका को खारिज कर दिया गया है और आपराधिक मामला संख्या 333/2013 में विद्वान मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, श्री करणपुर जिला, श्रीगंगानगर द्वारा पारित दिनांक 22.06.2013 के आदेश की पुष्टि की है, जिसके तहत विद्वान मजिस्ट्रेट ने

अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति (अत्याचार निवारण) अधिनियम, 1989 की धारा 3(1)(एक्स) के तहत अपराध के लिए संज्ञान लिया था।

2. संक्षेप में, याचिका में उल्लिखित तथ्य यह हैं कि 10 जनवरी, 2013 को शिकायतकर्ता, पृथ्वी राम ने अतिरिक्त मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, श्री करणपुर, जिला, श्रीगंगानगर के समक्ष शिकायत दर्ज कराई। निचली अदालत ने निर्देश दिया कि शिकायत को सीआरपीसी की धारा 156(3) के तहत जांच के लिए श्री करणपुर पुलिस स्टेशन को भेजा जाए। पुलिस ने एफआईआर दर्ज की और अपनी जांच शुरू की। अपनी जांच के बाद, पुलिस ने एक नकारात्मक अंतिम रिपोर्ट प्रस्तुत की। जवाब में, शिकायतकर्ता ने एक विरोध याचिका दायर की। शिकायतकर्ता का बयान दर्ज किया गया, और गवाह शिव राम, बनवारी लाल और रतन लाल ने धारा 200 और 202 सीआरपीसी के तहत गवाही दी। दलीलों पर विचार करने के बाद, निचली अदालत ने 22 जून, 2013 के आदेश के अनुसार याचिकाकर्ता के खिलाफ एससी/एसटी (अत्याचार निवारण) अधिनियम की धारा 3(1)(x) के तहत अपराध का संज्ञान लिया। इस आदेश से असंतुष्ट, याचिकाकर्ता ने श्री गंगानगर के एससी/एसटी (अत्याचार निवारण) अधिनियम मामलों के विशेष न्यायाधीश के पास एक पुनरीक्षण याचिका दायर की। विशेष न्यायाधीश ने 23 सितंबर, 2013 को ट्रायल कोर्ट के फैसले को बरकरार रखते हुए पुनरीक्षण याचिका खारिज कर दी। परिणामस्वरूप, यह याचिका दायर की गई।

3. उपरोक्त पृष्ठभूमि में, मैंने प्रतिद्वंद्वी तर्क सुने हैं और केस फाइल का अवलोकन किया है।

4. याचिकाकर्ता के विद्वान वकील का तर्क है कि अभियोजन पक्ष के साक्ष्य के आधार पर, एससी/एसटी अधिनियम की धारा 3(1)(x) के तहत कोई प्रथम दृष्टया मामला नहीं बनता है। वकील का तर्क है कि ट्रायल कोर्ट ने इस धारा

के तहत अपराध का संज्ञान लेने में गलती की है, क्योंकि जांच अधिकारी ने गहन जांच के बाद पाया कि प्रत्यक्षदर्शी रतन लाल ने तीनों आरोपियों की उपस्थिति का उल्लेख नहीं किया। इसके अतिरिक्त, शिकायतकर्ता पृथ्वी राम ने अपने भाई चुन्नी लाल की उपस्थिति से इनकार किया। अपराध का संज्ञान लेते समय ट्रायल कोर्ट ने इन महत्वपूर्ण तथ्यों पर विचार नहीं किया।

5. विद्वान विशेष न्यायाधीश एससी/एसटी मामलों द्वारा पारित दिनांक 23.09.2013 का आक्षेपित आदेश इस आधार पर है कि सीआरपीसी की धारा 200/202 के तहत दर्ज शिकायतकर्ता के बयानों से आपराधिक दोष का मामला बनता है और इसलिए आरोपी/याचिकाकर्ता को तलब किया गया था। विद्वान मजिस्ट्रेट ने उल्लेख किया कि पृथ्वी राम ने आरोप लगाया कि आरोपी ने अपमानजनक शब्दों का प्रयोग करके उसका अपमान किया और उसके हलफनामों के संबंध में उसकी विश्वसनीयता पर सवाल उठाया। इस शिकायत का समर्थन पृथ्वी राम और गवाह शिव राम, बनवारी लाल और रतन लाल के बयानों से हुआ, जिनमें से सभी ने अपमानजनक व्यवहार की पुष्टि की।

6. दोनों विद्वान न्यायालय यह नोटिस करने में विफल रहे कि एससी/एसटी अधिनियम की धारा 3(1)(x) के अनुसार अपमान या धमकी सार्वजनिक स्थान पर दूसरों की उपस्थिति में की जानी चाहिए। इस मामले में, शिकायतकर्ता याचिकाकर्ता से ऐसे स्थान पर मिला जो सार्वजनिक स्थान नहीं था और इस बात का कोई सबूत नहीं है कि याचिकाकर्ता की टिप्पणी सार्वजनिक रूप से की गई थी। इस प्रकार, ऐसे प्रारंभिक साक्ष्य के बिना, एससी/एसटी अधिनियम की धारा 3(1)(x) के तहत अपराध सिद्ध नहीं होता।

7. इसके अलावा, एफआईआर से ही पता चलता है कि शिकायतकर्ता ने व्यक्तिगत रूप से याचिकाकर्ता से मुलाकात की और रुघा राम और छिंदर सिंह से झूठा हलफनामा तैयार करने के बारे में पूछताछ की। इस मुलाकात के

दौरान, याचिकाकर्ता ने कथित तौर पर व्यंग्यात्मक तरीके से जाति-आधारित टिप्पणी की। प्रासंगिक रूप से, जांच अधिकारी द्वारा दर्ज किए गए शिकायतकर्ता के बयान से यह पता नहीं चलता कि याचिकाकर्ता ने सार्वजनिक रूप से ऐसी टिप्पणी की थी। इसके बाद ही, शिकायतकर्ता ने अन्य लोगों के साथ तीन अतिरिक्त गवाहों- शिव राम, बनवारी लाल और रतन लाल के साक्ष्य पेश किए, जिन्होंने ट्रायल कोर्ट के समक्ष गवाही दी कि याचिकाकर्ता ने सार्वजनिक रूप से शिकायतकर्ता को जाति के आधार पर गाली दी थी। हालांकि, जांच अधिकारी के समक्ष शिकायतकर्ता के बयान से संकेत मिलता है कि ये गवाह न तो घटनास्थल पर मौजूद थे और न ही शिकायतकर्ता के साथ थे। इसलिए, 22 जून, 2013 को दिए गए आदेश के अनुसार याचिकाकर्ता के खिलाफ इस मामले का संज्ञान लेना कानूनी प्रक्रिया का दुरुपयोग है।

8. इस प्रकार विवादित आदेश की समीक्षा करने पर यह पता चलता है कि विद्वान ट्रायल कोर्ट द्वारा संज्ञान आदेश बिना किसी विवेक के अत्यंत यांत्रिक तरीके से पारित किया गया है। यह केवल दर्ज किया गया है कि शिकायतकर्ता के दर्ज किए गए बयानों के मद्देनजर संज्ञान लिया जा रहा है।

9. अभियोजन पक्ष द्वारा दायर की गई विस्तृत नकारात्मक अंतिम रिपोर्ट के बारे में किसी भी तरह की कोई चर्चा या कानाफूसी नहीं हुई है। इस संबंध में, भगवान सहाय खंडेलवाल और अन्य बनाम राजस्थान राज्य में दिए गए निर्णय पर भरोसा किया जा सकता है। भगवान सहाय में दिए गए निर्णय का प्रासंगिक हिस्सा नीचे दिया गया है:

> 6. प्रत्येक व्यक्ति की जीवन और व्यक्तिगत स्वतंत्रता अत्यंत महत्वपूर्ण है। इसलिए, बिना किसी उचित कारण और कानून द्वारा स्थापित प्रक्रिया के बिना जीवन और व्यक्तिगत स्वतंत्रता में हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता। इसलिए, संज्ञान लेना एक

गंभीर मामला है। क्योंकि इसमें किसी व्यक्ति के जीवन और व्यक्तिगत स्वतंत्रता को बाधित करना शामिल है। आपराधिक मुकदमे का सामना करना एक कठिन परीक्षा है, जो कथित अपराधी की प्रतिष्ठा, वित्त, ऊर्जा और समय पर प्रतिकूल प्रभाव डालती है। इसलिए, संज्ञान लेना यांत्रिक तरीके से नहीं किया जा सकता। इसे प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर विवेकपूर्ण तरीके से विचार करने के बाद किया जाना चाहिए। हालांकि, संज्ञान लेने के चरण में साक्ष्य की सावधानीपूर्वक जांच की आवश्यकता नहीं है। लेकिन मजिस्ट्रेट को मामले पर समग्र रूप से विचार करना चाहिए। साक्ष्य पर टुकड़ों में विचार करना न्यायिक दृष्टि के अनुरूप नहीं है। इसलिए, यदि किसी एफआईआर या शिकायत के बाद नकारात्मक अंतिम रिपोर्ट दी जाती है, जिसके बाद विरोध याचिका दी जाती है, तो विरोध याचिका को स्वीकार करते हुए, न्यायिक मजिस्ट्रेट को मामले पर विचार करना चाहिए। नकारात्मक अंतिम रिपोर्ट पर चर्चा करने के लिए कानूनी रूप से बाध्य है। इस तरह की चर्चा तीन कारणों से जरूरी है: सबसे पहले, प्राकृतिक न्याय के सिद्धांत मांग करते हैं और निर्देश देते हैं कि किसी अधिकार को प्रतिकूल रूप से प्रभावित करने वाला कोई भी आदेश एक बोलने वाला आदेश होना चाहिए। हालांकि एक विस्तृत चर्चा की आवश्यकता नहीं हो सकती है, लेकिन आदेश में नकारात्मक अंतिम रिपोर्ट से असहमत होने के लिए विवेकपूर्ण दिमाग के उपयोग को दर्शाने वाले पर्याप्त कारण होने चाहिए। दूसरे, चूंकि संज्ञान आदेश एक संशोधन योग्य आदेश है, इसलिए उच्च न्यायिक अधिकारियों को नकारात्मक अंतिम रिपोर्ट से असहमत

होने के लिए न्यायिक मजिस्ट्रेट के दिमाग में आने वाले कारणों को जानने का अधिकार है। ऐसे कारणों की अनुपस्थिति में, उच्च न्यायिक अधिकारी (सत्र न्यायालय या उच्च न्यायालय) अंधेरे में रह जाते हैं। तीसरा, यह कानून का एक स्थापित सिद्धांत है कि न्याय न केवल किया जाना चाहिए, बल्कि ऐसा प्रतीत भी होना चाहिए कि न्याय किया गया है। इसलिए, अभियुक्त को यह जानने का अधिकार है कि विद्वान न्यायिक मजिस्ट्रेट ने पुलिस द्वारा पूरी जांच के बाद प्रस्तुत नकारात्मक अंतिम रिपोर्ट से क्यों असहमति जताई है। यदि ऐसे कारण नहीं बताए गए हैं, तो कथित अपराधी को तर्क की वैधता पर सवाल उठाने में कठिनाई हो सकती है, इसलिए एक गुप्त आदेश एक न्यायसंगत आदेश नहीं है, जबकि संज्ञान आदेश हमेशा एक न्यायसंगत आदेश होना चाहिए।

7. संपत सिंह बनाम हरियाणा राज्य (1993 एससीसी (क्रि.) 376) के मामले में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने स्पष्ट रूप से कहा था कि मजिस्ट्रेट को नकारात्मक अंतिम रिपोर्ट से असहमत होने का कारण बताना चाहिए। यदि ऐसा कोई कारण नहीं दिया जाता है, तो कानून की दृष्टि में आदेश अस्थिर है। उक्त निर्णय से संकेत लेते हुए, इस न्यायालय ने गोपाल शर्मा बनाम राजस्थान राज्य (2005 (10) आरडीडी 4197 (राजस्थान)) के मामले में भी ऐसा ही दृष्टिकोण रखा है।

8. इस तथ्य के बावजूद कि माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने संपत सिंह (सुप्रा) के मामले में विधि का सिद्धांत निर्धारित किया था, आश्चर्यजनक रूप से न्यायिक मजिस्ट्रेट अभी भी माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा प्रतिपादित सिद्धांत का पालन

किए बिना रहस्यमय आदेश पारित कर रहे हैं। न्यायिक मजिस्ट्रेट द्वारा की गई चूक के कारण, इस न्यायालय में रहस्यमय और अतार्किक संज्ञान आदेश को चुनौती देने वाली पुनरीक्षण याचिकाओं की बाढ़ आ गई है। इस तरह के अस्थिर आदेश पहले से ही बोझ से दबे उच्च न्यायालय पर अनावश्यक रूप से बढ़ते जा रहे हैं। इसलिए, इस तरह के अवैध आदेश पारित करना हम सभी के लिए गंभीर चिंता का कारण है। सबसे पहले, विद्वान न्यायिक मजिस्ट्रेटों को माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निर्धारित सिद्धांत को जानना चाहिए। दूसरे, ऐसे आदेश कथित अपराधी के खुद का बचाव करने के मौलिक अधिकार का उल्लंघन करते हैं। तीसरे, ऐसे आदेश इस न्यायालय में आने वाले मुकदमों की बढ़ती संख्या में इजाफा करते हैं।

10. मैं उपरोक्त व्यक्त विचारों से सम्मानपूर्वक सहमत हूँ। वर्तमान मामले में तथ्य समान हैं और भगवान सहाय मामले में उपरोक्त टिप्पणियाँ यहाँ भी लागू होती हैं। मुझे कोई कारण नहीं दिखता कि इसका लाभ याचिकाकर्ता को क्यों न दिया जाए।

11. तदनुसार, याचिका स्वीकार की जाती है और 23.09.2013 और 22.06.2013 के विवादित आदेशों को निरस्त किया जाता है, जिसके परिणाम आगे आएंगे।

12. लंबित आवेदन, यदि कोई हो, का निपटारा किया जाता है।

(अरुण मोंगा),जे

(यह अनुवाद एआई टूल: SUVAS की सहायता से किया गया है)

अस्वीकरण: यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के लिए सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।